प्रेमचन्द युगीन राजनीतिक परिवेश

डॉ. अरुण घोगरे
सहयोगी प्राध्यापक एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष,
बी.एस. पाटील महा., परतवाड़ा

प्रेमचंद का युग भारतीय जनता के राष्ट्रीय और राष्ट्रव्यापी संघर्ष का युग था। देश की सारी चेतना पराधीनता की ग्रंथियों से आक्रांत हो चुकी थी, जिससे आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में अराजकता फैल रही थी। सामाजिक क्षेत्र में कुरीतियाँ और अंधविश्वास बढ़ते जा रहे थे। ग्रामीण क्षेत्र की स्थिति भी अत्यंत दयनीय हो चुकी थी। एक ओर शहरी प्रदेश में पाश्चात्य भौतिक सभ्यता का तेजी से प्रचार हो रहा था तथा बुद्धिवाद का बोलबाला बढ़ रहा था। वहीं दूसरी ओर ग्रामीण जीवन बिछड़ता जा रहा था। उसकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति जर्जर होती जा रही थी, जिससे व्यक्ति का जीवन जटिल से जटिलतम होता जा रहा था। प्रेमचंद ने इन सारी परिस्थितियों को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। प्रेमचंद के उपन्यास यद्यपि ऐतिहासिक नहीं हैं, फिर भी वे राष्ट्रीय भावनाओं और तत्कालीन युग की सभी समस्याओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। नगरों में जो राजनीतिक आन्दोलन भड़क रहे थे, उनका असर गाँवों में भी हो रहा था। गाँवों में राजनीतिक चेतना का प्रवेश होने लगा था और गाँव के भोले–भाले कृषक और मजदूर अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागृत हो चुके थे। 'सेवासदन' का नायक सदन अपने गांव से नगर आ गया। वह शहरी जीवन के सम्पूर्ण दाँव–पेंच सीख गया था और भाषण सुनने भी जाया करता था। 'प्रेमाश्रम' का लखनपुर गाँव बनारस से बारह मील की दूरी पर है। शहर के पास होने के कारण, शहर में चल रहे आन्दोलनों का और राजनीतिक चेतना का प्रवेश लखनपुर गांव में होना स्वाभाविक है। लखनपुर गांव का कृषक मनोहर स्वभाव से विद्रोही प्रवृत्ति का व्यक्ति है। वह गिरधर से विद्रोह के स्वर में कहता है – ''न कारिन्दा कोई काटू है न जमींदार कोई हौवा है। यहाँ कोई दबैल नहीं है। जब कौड़ी–कौड़ी लगान चुकाते हैं तो धौंस क्यों सहें।''[1] यहाँ पर मनोहर का विद्रोही स्वर गांव में राजनीतिक चेतना के प्रवेश और राजनीतिक जागरण का स्वर सूत्रपात करता है। इसके साथ ही यही विद्रोही गांव और शहर को जोड़ने वाली कड़ी भी है।

'रंगभूमि' में जानसेवक की मिल के विरोध में पाण्डेपुर निवासियों द्वारा संघर्ष करना ही गांव में राजनीतिक चेतना के प्रवेश का प्रतिफल है। चूंकि पाण्डेपुर बनारस से लगा एक कस्बा है, अतः नगर में चल रहे आन्दोलनों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है।

डॉ. प्रताप नारायण टंडन के अनुसार– ''ग्रामीण और नगरीय जीवन से सम्बन्धित कोई भी ऐसा पक्ष नहीं है, जिसका अंकन विशद रुप से इस उपन्यास में लेखक ने न प्रस्तुत किया हो। इसके माध्यम से लेखक का मुख्य उद्देश्य यह चित्रित करना रहा है कि भारत में राष्ट्रीय और सामाजिक चेतना का जागरण जन समाज के स्तर पर क्रमशः विकसित होता रहा है। इसके लिए लेखक ने काशी

महानगरी और उसके निकटवर्ती पांडेपुर नामक ग्राम को कथा का मुख्य क्षेत्र बनाया है।''[2]

'कायाकल्प' में राष्ट्रीय आन्दोलन के समानांतर जगदीशपुर रियासत में चक्रधर के नेतृत्व में किसान एवं मजदूर आन्दोलन चलता है। जगदीशपुर और बनारस का राजनीतिक रिश्ता चक्रधर के माध्यम से कायम होता है। 'कर्मभूमि' में शहर का नवयुवक अमरकान्त गांव में जाकर ग्रामीणों को अपने अधिकारों के प्रति सचेत करता है, उनमें जागृति उत्पन्न कर उन्हें आन्दोलन के लिए प्रेरित करता है। अमरकान्त गाँव में जाकर गांव और नगर के बीच सामाजिक रिश्ता बनाता है। यह अपनी राजनीतिक गतिविधियों के द्वारा गांव और शहर का परस्पर राजनीतिक रिश्ता भी कायम करता है।

डॉ. प्रतापनारायण टंड़न के मतानुसार – ''अब कर्मभूमि का कथा क्षेत्र नगर से हटकर एक गांव में केन्द्रित हो जाता है। वहीं पर अमरकान्त अछूतों की बस्ती में रहने लगता है। वहीं उसकी भेंट मुन्नी से भी होती है। वह निकटवर्ती स्थानों में राष्ट्रीय जागृति उत्पन्न करने की चेष्टा करता है। उसे उन अनेक कष्टों का पता चलता है, जिनसे ग्रामीण जनता सदैव ग्रस्त रहती है। एक आन्दोलन के रूप मैं वह सुधार कार्य आरंभ करता है।''[3]

'गोदान' का विद्रोही पात्र गोबर शहर जाकर वहाँ चल रहे आन्दोलनों को देखता है, उनमें भाग लेता है और नुक्कड़ों पर होने वाली आम सभाओं एवं भाषणों को भी सुनने जाता है। उसके आचार–विचार में इन भाषणों को सुनकर परिवर्तन होने लगता है। वह गांव आकर जमींदार, सेठ, साहूकारों और पंड़ितों के प्रति अपने पिता से रोष प्रकट करता है। वह मन ही मन अपने परिवार की स्थिति पर खेद प्रकट करता हुआ सोचता है–'' वह गुलामी करता है, लेकिन भर पेट खाता तो है। केवल एक ही मालिक का तो नौकर है। यहाँ तो जिसे देखों वही रोब जमाता है। गुलामी है, पर सुखी। मेहनत करके अनाज पैदा करों और जो रुपए मिलें वह दूसरों को दे दो। आप बैठे राम–राम करो। दादा का ही कलेजा है कि यह सब सहते हैं। उससे तो एक दिन न सहा जाए।''[4]

मेहता–मालती होरी के गांव जाकर किसानों से बातचीत करते हैं। वे किसानों में जाकर भाषण देते हैं और उनकी सामाजिक बुराइयों को दूर करने का प्रयास करते हैं। राजनीतिक रूप से संगठित भी करते हैं। जनेश्वर वर्मा का कथन है–'' कृषक वर्ग का शोषण सामान्यतः चार प्रकार के लागों द्वारा किया जाता है– एक तो जमींदार, दूसरे साहूकार या महाजन, तीसरे धर्माचार्य और चौथे सरकारी अफसर और कारिन्दे। इन सबके सम्मिश्रण शोषण का परिणाम यह होता है कि घर जमीन अदि सब कुछ खोकर किसान से मजदूर बन जाता है। यही किसान मजदूर बनकर काम की तलाश में शहरों में जाते हैं और मिल मजदूर बनते हैं, जहाँ उनके अंदर राजनीतिक जागृति और वर्ग चेतना का संचार होता है।''[5]

डॉ. प्रताप नारायण टंडन गोबर के व्यक्तित्व एवं चरित्र में आयी राजनीतिक चेतना का उल्लेख करते हुए लिखते हैं– ''शहर आकर गोबर के मस्तिष्क में एक प्रकार की चेतना का भी जागरण होने लगता है। शहर में वह अनेक प्रकार के राजनीतिक भाषण सुनता है और आन्दोलन देखता

है। उसके स्वभाव और विचारों में एक प्रकार मनोवैज्ञानिक परिवर्तन होता है।'' [6]

निष्कर्ष स्वरुप कहा जा सकता है कि प्रेमचंद के उपन्यासों में गांव और शहर का रिश्ता उतना ही घनिष्ठ है, जितना कि सामाजिक रिश्ता है। प्रेमचंद ने गांव में राजनीतिक चेतना का प्रवेश अपने पात्रों के माध्यम से कराया है। उन्होनें ग्रामीणों में जागृति पैदा की और उन्हें अपने अधिकारों के प्रति लड़ना सिखाया। ग्रामीण पात्रों को शहर भेजकर उनमें नई चेतना का संचार किया तथा उसके आचार–विचार में नए ढंग से राजनीतिक परिवर्तन लाने का प्रयास किया है।

संदर्भ

1. प्रेमाश्रम : प्रेमचंद, पृ. 12
2. डॉ. प्रतापनारायण टंडन : हिन्दी उपन्यास का परिचयात्मक इतिहास, पृ. 231–232
3. डॉ. प्रतापनारायण टंडन : प्रेमचंद, पृ. 60
4. गोदान : प्रेमचंद, पृ. 303
5. जनेश्वर वर्मा : प्रेमचंद : एक मार्क्सवादी मूल्यांकन, पृ. 342
6. डॉ. प्रतापनारायण टंडन : हिन्दी उपन्यास का परिचयात्मक इतिहास, पृ. 268